International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(2): 110-113

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(2): 110-113
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 24-01-2019
Accepted: 26-02-2019

डॉ. मोना बाला
सहायक प्राध्यापक (गेस्ट फैकल्टी),
स्नातकोत्तर विभाग, पटना
विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

Correspondence
डॉ. मोना बाला
सहायक प्राध्यापक (गेस्ट फैकल्टी),
स्नातकोत्तर विभाग, पटना
विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

वेद में वर्णित जलतत्त्व

डॉ. मोना बाला

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य का सबसे प्राचीन साहित्य वेद रूप में प्राप्य होता है। वेद शब्द विद् धातु से घञ् प्रत्यय से निष्पन्न है जिसका अर्थ 'ज्ञान' है। डा.मंगलदेव शास्त्री ने वेद और विद्या को समानार्थक माना है। वास्तव में वेदों में सम्पूर्ण ज्ञान स्त्रोत है। आचार्य सायण ने वेद के विषय में कहा है–

मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्।

अर्थात् वेदों को मन्त्रपरक एवं ब्राह्मणपरक माना गया है। वेदों में सभी प्रकार की विद्याओं को स्थान प्राप्त है यही कारण है कि यह अत्यंत प्राचीन एवं वैज्ञानिक ग्रन्थ हैं।
वेदों में देवताओं की स्तुति, कर्मकाण्डों में यज्ञों का महत्त्व, संगीतशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्विद्या, दार्शनिक महत्त्व, तात्विक महत्त्व, राजकर्म, स्त्रीकर्म, व्यापार, कृषि कार्य, युद्ध विषय आदि का वर्णन प्राप्त होता है। वैसे भी कहा गया है–

'सर्वज्ञानमयो हि सः'

वेदों में वर्णित ज्ञान को सदैव एक वैज्ञानिक आधार प्राप्त रहा है, यही कारण है कि इतने दिनों बाद भी वैज्ञानिक कसौटी पर इनमें वर्णित तत्त्व खरे उतरते हैं। वेदों की कई बात पर संदेह प्रकट किया गया परन्तु जब उन पर प्रयोग किये गए तो सत्य सिद्ध हुए।
जीवन में जलतत्त्व की महता है, इसी कारण वैज्ञानिक आज भी किसी नये ग्रह की खोज करते हुए जलतत्त्व को खोजते हैं। यदि नये ग्रह पर जल प्राप्त होता है, तब ही वे नव जीवन की संभावना व्यक्त करते हैं। जल औषधि–वनस्पति आदि का आधार है। जल की महत्त्वता मानते हुए पंच महाभूतों में इसका स्थान सुरक्षित है। जल पृथ्वी पर अनेक रूपों में विद्यमान है, इसी पृथ्वी पर समुद्र, नदियाँ, तलाब, कूप, वर्षा के जल हैं जो अन्नों को पुष्ट करते है, अन्न से मानव शरीर पुष्ट होता है। खेती के लिए अन्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं उपनिषदों में भी अन्न की महत्त्वता को मान्यता मिली है। तैत्तिरीयोपनिषद् में अन्न को ही प्राण बताया गया है।

प्राणो वा अन्नम्।[1]

और तैत्तिरीयोपनिषद् के अष्टम अनुवाक में कहा गया है कि अन्न की अवहेलना नहीं करनी चाहिए तथा जल ही अन्न है।

आपो वा अन्नम्।[2]

इस अनुवाक में जल में ही तेज की प्रतिष्ठापना की गई है। श्वेताश्वतरोपनिषद् में परम ब्रह्म को मेघ, ऋतु एवं सप्त समुद्ररूप बताया गया है जिससे भुवन (जगत) की उत्पत्ति बतायी गयी है–

नीलः पतौ हरितो लोहिताक्षस्तडिद्गर्भ ऋतवः समुद्राः।
अनादिमत्त्वं विभुत्वेन वर्तसे यतो जातानि भुवनानि विश्वा।।[3]

[1] तैत्तिरीयोपनिषद् (भृगु बल्ली)– 7/3
[2] तैत्तिरीयोपनिषद् (भृगु बल्ली)– 8/3
[3] श्वेताश्वतरोपनिषद्– 4/4

छान्दोग्योपनिषद् में जल में सामोपासना का वर्णन किया गया है जिससे जल तत्त्व की महत्त्वता स्पष्ट होती है।
ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल के बारहवें सूक्त में इन्द्र की स्तुति हैं। इसी में आए एक ऋचा में कहा गया है

> यो हत्वाहिमरिणात्सप्त सिन्धून्यो गा उदाजदपधा वलस्य।
> यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्रः।।[4]

अर्थात् जिसने सर्पाकार राक्षस को मारकर सात नदियों को प्रवाहित किया, जिसने बल नामक असुर की गुफा से अपधा गायों को छुड. ाया था, जिसने दो मेघों के बीच अग्नि (विधुत्) को उत्पन्न किया था तथा जो युद्ध में संहारक है, हे मनुष्यों, वही इन्द्र हैं।
इस ऋचा में इन्द्र के कार्यों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है जिसमें इन्द्र को वृत्र के मारने पर सप्त नदियों के बहने की बात कही गयी है। निरूक्त परम्परा में वृत्र से अर्थ मेघ किया गया है अर्थात् सर्पाकार मेघ पर इन्द्र के प्रहार से सप्त नदियों का उद्भव बताया गया है।
वहीं ऋग्वेद के पर्जन्य सूक्त में पर्जन्य की स्तुतियाँ है पर्जन्य को जल बरसाने वाला मेघ कहा गया है। मानवीय रूप में पर्जन्य को पवित्र जल का पिता भी कहा गया है। ऋग्वेद की एक ऋचा में कहा गया है–

> प्र वाता वान्ति पतयन्ति विद्युत् उदोषधीर्जिहते पिन्वते स्वः।
> इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति।।[5]

अर्थात् जब पर्जन्य पृथ्वी को जल के द्वारा सुरक्षित करता है, सम्पन्न बनाने का कार्यक्रम चलाता है। हवाएँ बहने लगती हैं, बिजलियाँ गिरने लगती है, पेड़–पौधे, वनस्पति अंकुरित होने लगते हैं। आकाश जल बरसाने लगता है, भूमि या समृद्धि समस्त संसार को सम्पन्न करती है।
इस ऋचा में स्पष्ट कहा गया है कि पर्जन्य देवता जल को पृथ्वी हेतु सुरक्षित करते है ताकि पेड़–पौधे एवं वनस्पति इस धरा में अंकुरित हो एवं मनुष्य के हित में उपयोगी हो। वैसे भी जल संरक्षण की महत्त्वता को बारम्बार वैज्ञानिक स्वीकारते रहे हैं। 'Save Water Save Earth' की संकल्पना (Concept) भी दी गई है।
अथर्ववेद संहिता में पृथ्वीसूक्त में आयी एक ऋचा में कहा गया है–

> द्यौश्च न इदं पृथिवी चान्तरिक्षं च मे व्यवः।
> अग्निः सूर्य आपो मेधां विश्वे देवाश्च सं ददुः।।[6]

अर्थात् द्यौ, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष के साथ अग्निः, सूर्य का भी जल, वृष्टि से गहन संबंध है। इस ऋचा में आए 'आपः' शब्द से व्यापक अर्थ में जल का अभिप्रेत होता है। द्युलोक, अंतरिक्ष, अग्नि एवं सूर्य के साथ इस व्यापक जल तत्त्व से मेधा प्राप्त होने का उल्लेख मिलता है। अर्थात् जल को मेधा का पोषक बताया गया है। वैसे ऋग्वेद में सरस्वती की स्तुति में 'मेधां देवी सरस्वती' कहा गया है। सरस्वती को जहाँ मेधा की देवी रूप में माना गया है वही सरस्वती को नदी रूप में यथेष्ठ एवं प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है, ऋग्वेद में कहा भी गया है–

> महो अर्ण सरस्वती प्र चेतपति केतुना।
> धियो विश्व वि राजति।।[7]

अर्थात् नदीरूपी सरस्वती प्रवाहरूप कर्म द्वारा प्रचुर तरंगयुक्त जल व्यक्त करती है, दिखलाती है तथा सारे ज्ञान को भी प्रकाशित करती है। वैसे नदी में तरंग एवं गति जीवन्ता का प्रतीक है वैसे ही मेधा अथवा ज्ञान में जितना अधिक तरंग रहेगा वह भी जीवन्त एवं ज्वलन्त रहेगी। संभव है कि मेधा का रसतत्त्व से घनिष्ट संबंध होने के कारण ही हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र में उपनयन के अन्तर्गत मेधा को सुरभि रस युक्त और जल से वृद्धि करने वाला बताया गया है।[8]
वर्षा के महत्त्व को वेदों में प्रमुखता से समझा एवं बताया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है–

> वर्षेण भूमिः पृथिवी वृतावृता सा नो दधातु भद्रया प्रिये धामनि धामनि।[9]

अर्थात् जब सब को जीवन प्रदान करने वाली व्यापक भूमि वृष्टि जल से आच्छादित हो जाती है तो उससे सभी स्थान धन–धान्य से समृद्ध हो जाने के कारण सब को प्रिय होती है।
साथ ही साफ एवं शुद्धता के लिए भी कहा गया है–

> 'शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु'

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में ऋतुएँ गिनाई गई हैं। वहाँ वर्षा ऋतु का वर्णन गीष्म के पश्चात् किया गया है, इससे भौगोलिक प्रक्रिया के स्पष्ट वैज्ञानिक संकेत मिलते हैं। इससे पता चलता है कि भीषण गर्मी से वाष्पीकरण की प्रक्रिया द्वारा मेघ बनते हैं तदन्तर वर्षा होती है। यही वर्षा पृथ्वी को शस्यश्यामला बनाती है। पर्जन्य वर्षा करते है इसी कारण उन्हें पिता कहा गया है तथा उनसे प्रार्थना की गई है–

> पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु।।[10]

अथर्ववेद के पृथ्वीसूक्त में वर्षा के जल को तो महत्त्वपूर्ण बताया गया है साथ ही हिमवान् पर्वतों से भी नदियों में वर्ष भर जल रहता था ये जल जंगलों और खेती का पोषण करती थी[11] एक ऋचा में कहा गया है कि

> यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति।
> स नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा।।[12]

अर्थात् जिस भूमि पर रात दिन निर्बाध व्यापक जल निर्बाध गति से प्रवाहित हो, वह अनेक जलधारा वाली भूमि हमारे लिए जल रूपी दूध का दोहन करे और उसके द्वारा हमारा ब्रह्मतेज करें। बहुत स्पष्ट संकेत है कि जल धाराएँ अपने प्रवाह से वन, वनस्पति आदि को सम्पुष्ट करेगे वही सभी जन–जीव के लिए महत्त्व का होगा। जल को पृथ्वी का दूध माना गया है वह नहीं होगा तो इस पर रहने वालों का पोषण संभव नहीं है। जल से ही पोषित होने पर पृथ्वी की गोद हरी–भरी होती है अन्न होता है, औषधि होती है, वनस्पतियाँ होती हैं, पशुओं को चारा मिलना है, प्राणियों का भरण–पोषण होता है।
गंध पृथ्वी का गुण है यह गंध रूपी गुण औषधियों एवं जल सब में उपस्थित रहता है। जैसे घड़े में रखे जल में मिट्टी की सोन्धी गंध मिली है। एक ऋचा में कहा भी गया है–

> यस्ते गन्धः पृथिवि सम्बभूव
> यं विभ्रत्योषधयो यमापः।[13]

---

[4] ऋग्वेद– 2.12.3
[5] ऋग्वेद– 5.83.4
[6] अथर्ववेद– 12.1.53
[7] ऋग्वेद– 1.3.12
[8] हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र– 1.8.4
[9] अथर्ववेद– 12.1.52
[10] अथर्ववेद– 12.1.12
[11] तथैव– 12.1.11
[12] अथर्ववेद– 12.1.9

पृथ्वी के भीतर एवं बाहर अनेक रूपों में व्याप्त जल का मूल स्त्रोत वर्षा है। समुद्रों एवं मेघों का आदान–प्रदान चलता रहता है गर्मी में वाष्पीकरण की प्रक्रिया मेघ बनाती है तो वर्षा कर के पृथ्वी के जल को पुनः लौटा देती है।

जल तत्त्व से ही पृथ्वी पर अन्न, औषधियों का भरण–पोषण होता है तथा पृथ्वी पर प्राणियों का सम्पोषण एवं सम्वर्धन होता है। पृथ्वी पर वर्षा केवल मनुष्य, पक्षियों, पशुओं को ही जीवन प्रदान नहीं करती अपितु जलवायु तथा अन्य कारणों से पृथ्वी की गुहा (बिलों) में निवास करने वाले कीड़े–मकोड़े के लिए प्रसन्नता का कारण भी होती है। अधिक वर्षा होने पर विलों, कूपों में अधिक जल भरने पर यह कीड़े मकोड़े बाहर आ जाते हैं, एक ऋचा में इस से बचने की प्रार्थना की गयी है–

यस्ते सर्पो वृश्चिकस्तृष्टदंश्मा हेमन्तजब्धो भृमलो गुहा शये।
क्रिमिर्जिन्वत्पृथिवि यद्यदेजति प्रावृषि तन्नः सर्पन्मोपसृपद्यच्छिवं तेन नो मृड।।[14]

पृथ्वी के भीतर जाकर यह जल अन्य तत्त्वों के साथ मिलकर खनिज तेल के रूप में परिवर्तित हो जाती है। एक ऋचा में कहा गया है कि पृथ्वी के भीतर वह(जल) अग्नि है।[15] एक अन्य ऋचा में कहा गया है कि जल अग्नि को धारण करने वाली है।[16] खनिज तेल के अतिरिक्त जल में विद्यमान अग्नि का एक और संभावित कारण हाइड्रोजन गैस को माना जा सकता है। जल का रासायनिक सूत्र H_2O है अर्थात् हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन के मेल से जल बना है।

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में सृष्टि के आरम्भ का गंभीर वर्णन प्राप्त होता है इसमें अम्भः अथवा सलिल से जल शब्द को बताया गया है।

अम्भः किमासीद् गहनं गंभीरम् [17]

वह उस अस्पष्ट, अव्यक्त तथा व्यापक सूक्ष्म तत्त्व का अप्रकट रूप का द्योतक है जिसमें भावी सृष्टि के बीज छिपे हुए हैं।

अथर्ववेद के पृथ्वीसूक्त में 'आपः' की अव्यक्त व्यापक स्थिति का वर्णन 'अर्णवं' के द्वारा किया गया है। अर्णव शब्द साधारणतया समुद्र के लिए होता है, अर्णव नामक यह समुद्र उस गति का बोधक है, जो सृष्टि से पूर्व कार्यजगत के सभी तत्त्वों के अपने मूल में अव्यक्त रूप में मिले हुए थे। इस कारण यह अर्णव पृथ्वी के आरम्भ में सलिल थी।[18]

ऋग्वेद के वाक्सूक्त में जगत कारण रूप वाणी अपना आश्रय समुद्र के भीतर 'आपः' में बताती है वहीं से वह सब लोकों में फैल जाती है। वही जगत के पालनकर्त्ता को प्रेरणा देती है।[19]

वाल्मीकि रामायण में भी कहा गया है– 'सर्वं सलिलमेवासीत् पृथिवी यत्र निर्मिता'

अर्थात् सभी सलिलो से ही पृथ्वी का निर्माण हुआ है। वाल्मीकि रामायण में वर्षा ऋतु का अति मनोहारि वर्णन उपलब्ध होता है, श्रीराम द्वारा लक्ष्मण को सम्बोधित करते हुए कहा गया है–

अयं स कालः सम्प्राप्तः समयोऽद्य जलागमः।
सम्पश्य त्वं नभो मेद्यैः संवृतं गिरिसंनिभैः।।[20]

अर्थात् अब यह जल की प्राप्ति करानेवाला वर्षाकाल आ गया है। आकाश मेघों से आच्छन्न है, इसमें स्पष्ट श्रीराम बता रहे है कि जल की प्राप्ति हेतु यह ऋतु महत्त्वपूर्ण है। ग्रीष्म से तपी हुई घास वर्षाकाल में नूतन जल से भीगकर वाष्प विमोचित करेगी यह वाष्पीकरण प्रक्रिया का वर्णन किया गया है–

एषा धर्मपरिक्लिष्टा नववारिपरिप्लुता।
सीतेव शोकसंतप्ता मही बाष्पं विमञ्चति।।[21]

वाल्मीकि रामायण में आए इस वर्षा ऋतु वर्णन में जल राशि की महता प्रदर्शित की गई है वर्षा को नदी, वन, पर्वत, भूमि सभी के लिए अनिर्वाय बताया गया है।

महाभारत के मार्कण्डेयसमास्या पर्व के अन्तर्गत वर्षा ऋतु का वर्णन प्राप्य होता है, इससे इस ऋतु की महत्त्वता का बोध होता है। वर्षा ऋतु में धरती पर घास जम गयी है मतवाले डॉस और सर्प विचर रहे हैं। पृथ्वी जल से अभिसिक्त होकर शांत और सब के लिए मनोरम हो गयी है –

बभूव पयसा सिक्ता शान्ता सर्वमनोरमा।।[22]

वर्षा ऋतु में सब ओर जल भर जाता है और नदियाँ बड़े वेग से बहने लगती हैं–

क्षुब्धतोया महावेगाः श्वसमाना इवाशुगाः।
सिन्धवः शोभयांचक्रुः काननानि तपात्ययें।।[23]

वर्षा के जल से नदियाँ नव जीवन प्राप्त करती हैं तथा प्रकृति में भी नव जीवन का संचार करती हैं। मोर, पपीहा, कोकिल सभी आनन्दोन्मत्त हो जाते हैं। मेढक घमण्ड एवं उत्साह में टर्ट–टर्ट की ध्वनि करने लगता है इस पर प्रकृति मंगल ध्वनिमयी हो जाती है एवम् अत्यन्त शोभा को प्राप्त करती है। महाभारत के मार्कण्डेयसमास्या पर्व के अन्तर्गत मत्स्यावतार की कथा में सृष्टि का अन्त जल प्रलय से बताया गया है। कथा में स्नान करते हुए मनु को एक मछली मिलती है उसकी रक्षा मनु ने अत्यंत मनोयोग से किया मछली का आकार बढ जाने के बाद मनु ने उस मछली को समुद्र में डाल दिया तब उस मछली ने मनु से कहा कि जब चराचर जगत का पार्थिव नष्ट हो जाएगा तब मैं आप लोगों की रक्षा हेतु उपस्थित होऊँगा। जब जल प्रलय आया तो नाव को रस्सी के सहारे मछली ने अपने सिंग से खीचा।

वेगेन महता नावं प्राकर्षल्लवणाम्भसि।
स च तांस्तारयन् नावा समुद्रं मनुजेश्वर।।[24]

सारी पृथ्वी जलमय हो गई है, सारा विश्व एकार्णव के जल में डूबा हुआ है केवल सप्तर्षि, मनु और मत्स्य ये नौ लोग ही बचे हुए हैं।

सर्वमाम्भसमेवासीत् खं द्यौश्च नरर्पुंव।
एवंभूते तदा लोके संकुले भरतर्षभ।।[25]
अदृश्यन्तर्षयः सप्त मनुर्मत्स्यस्तथैव च।
एवं बहून् वर्षगणांस्तां नावं सोऽथ मत्स्यकः।।[26]

इस भयंकर जलप्रलय से बच जाने पर मनु ने पुनः सृष्टि की रचना की। इस कथा में जल से ही सम्पुष्ट मछली के द्वारा जल प्रलय में

[13] अथर्ववेद– 12.1.23
[14] अथर्ववेद– 12.1.46
[15] अथर्ववेद – 12.1.37
[16] तथैव– 12.1.19
[17] ऋग्वेद– 10.129.3
[18] अथर्ववेद– 12.1.8
[19] ऋग्वेद– 10.125.7
[20] वाल्मीकि रामायण– 4/28/2
[21] वाल्मीकि रामायण– 4/28/7
[22] महाभारत– 3/182/4 का उत्तरार्ध
[23] महाभारत– 3/182/6
[24] महाभारत– 3/187/42
[25] महाभारत– 3/187/45
[26] तथैव– 3/187/46

महात्माओं का रक्षण किया गया है। अगाध जल राशि से सृष्टि का विनाश भी संभव है यह भी इंगित किया गया है।

जल से नदियाँ वेगवती होती है। नदियों के समीप ही ज्यादा जनसंख्या वास करती है तथा सभ्यताओं का निर्माण हुआ है। नदी के जल अन्न उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं। अन्न से ही मनुष्य का भरण–पोषण होता है। वर्त्तमान समय में पनबिजली, सिंचाई आदि के लिए नदियों का समायोजन किया जा रहा है। पनबिजली से उत्पन्न विद्युत प्रकृति निर्भर होने से अत्यंत लाभकारी स्त्रोत है। मनुष्य के जीवन में जल बहुत ही महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

इन सभी बातों से स्पष्ट होता है कि जलतत्त्व से ही पृथ्वी एवं सृष्टि का निर्माण हुआ एवं यह भिन्न प्रकार से पृथ्वी के उपर क्रिया कलापों को आधार देती है यदि जल न हो तो जीवन की परिकल्पना नहीं की जा सकती है। जल ही जीवन है एक वैज्ञानिक तथ्य है जिसकी बारम्बार चर्चा एवं समर्थन वेद भी करता है।

संदर्भ पुस्तक

1. ऋग्वेद, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी
2. अथर्ववेद, कपूर ट्रस्ट प्रकाशन, हरियाणा
3. वाल्मीकि रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर
4. कल्याण उपनिषद् अंक, गीता प्रेस, गोरखपुर
5. महाभारत (प्रथम खण्ड), गीता प्रेस, गोरखपुर
6. महाभारत (द्वितीय खण्ड), गीता प्रेस, गोरखपुर
7. ऋक्यसूक्तनिकरः–डॉ.उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी
8. वैदिक सूक्तावली–डा.राम देव साहू, श्याम प्रकाशन जयपुर
9. प्राचीन भारतीय साहित्य का इतिहास–एम.विण्टरनिट्ज, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
10. संस्कृत–हिन्दी कोश–वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
11. निरूक्तम्–आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्तशिरोमणि, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी